|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 17: श्रद्धात्रयविभागयोग

1/2 (श्लोक 1-13), शनिवार, 20 जनवरी 2024

विवेचक: गीता विशारद श्री श्रीनिवास जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/XJ1Q6eIf6Ek

श्रद्धा, आहार और यज्ञ

गुरु वन्दना व्यास वन्दना के साथ आज के सत्र का प्रारम्भ हुआ। दैवी सम्पदा क्या है? आसुरी सम्पदा क्या है? कौन से सद्गुण धारण करने चाहिए? कौन से दुर्गुणों का त्याग करना चाहिए? यह हमने सोलहवें अध्याय में देखा, लेकिन कौन से गुण मुझ में हैं? यह दिखाने वाला यह सत्रहवाँ अध्याय है। यह अध्याय बताता है कि हमारी प्रवृत्ति किस प्रकार की है?

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्यकार्यव्यवस्थितौ |
ज्ञात्वा शास्त्रोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ||16- 24||

शास्त्र क्या कहते है? शास्त्र विधि से नियत कर्तव्य करने चाहिए। शास्त्र विविध प्रकार के होते हैं। यह हम यह जानते हैं कि जैसे रसायनशास्त्र, भौतिकशास्त्र, जीवशास्त्र, वेद शास्त्र, योगशास्त्र। श्रीमद्भगवद्गीता क्या है? परमात्मा के साथ एक रूप होने का शास्त्र है। शास्त्र में प्रयोग किए जाते हैं, फिर वह सिद्ध किए जाते हैं। सही या गलत सिद्ध होते है। हमारा शरीर भी एक प्रयोगशाला है। हम जब यह प्रयोग करके देखते हैं तो हमें अनुभूति होती है।

गीता पढ़ें, पढ़ायें,जीवन में लायें। जीवन में लाना अर्थात आचरण में लाना चाहिए।

Teaching is the best learning

ऐसी यह भगवद्गीता हम पढ़ रहे हैं। इसलिए **भगवान कहते हैं यह शास्त्र एकमात्र प्रमाण है। उसके अनुसार ही हमारा आचरण होना चाहिए।** अर्जुन के मन में कई प्रश्न आते हैं।

ऐसे ऐकता वचन मनात म्हणे अर्जुन ।
कर्म कराया शास्त्रात नाहीच का मोकळीक?

क्या शास्त्र के अनुसार ही वर्तन करना चाहिए। वर्तन करने के लिए थोड़ी सी भी छूट नहीं है ऐसे प्रश्न अर्जुन के मन में आते है।

17.1

अर्जुन उवाच
ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य, यजन्ते श्रद्धयान्विताः|
तेषां(न्) निष्ठा तु का कृष्ण, सत्त्वमाहो रजस्तमः||17.1||

अर्जुन बोले - हे कृष्ण ! जो मनुष्य शास्त्र-विधि का त्याग करके श्रद्धापूर्वक (देवता आदि का) पूजन करते हैं, उनकी निष्ठा फिर कौन-सी है? सात्त्विकी है अथवा राजसी-तामसी

विवेचन- जो लोग शास्त्र विधि का पालन न करके कार्य करते हैं, उसके दो कारण हो सकते हैं।

1- शास्त्र विधि क्या है यह पता ही नहीं है
2- शास्त्र विधि क्या होती है? यह बताने वाला भी कोई नहीं है। ऐसी अवस्था मे शास्त्र विधि का त्याग हो जाता है।

किन्तु शास्त्र के ऊपर उनकी श्रद्धा भी है, श्रद्धापूर्वक वह कर्तव्य भी करते है। अर्जुन का प्रश्न यह है कि उनकी निष्ठा कौनसी है? **निष्ठा अर्थात श्रद्धा की परिपक्व अवस्था**। उनकी निष्ठा कौन सी हैं? सात्त्विकी, तामसी है या राजसी है? अर्जुन प्रश्न पूछते हैं श्रद्धा शब्द को अच्छे से जान लेना जरूरी है। लोग श्रद्धा को अन्धश्रद्धा समझते हैं। श्रद्धा त्रिनेत्र होती है अपने तीनों नेत्र खुले रखकर जो श्रद्धा होती है, वह त्रिनेत्र श्रद्धा होती है। श्रद्धा परिपूर्ण होती है। श्रद्धा परिपक्व होती है। श्रद्धा नहीं है तो मनुष्य कुछ भी नहीं कर सकता है। जैसे हमें कोई बीमारी हो गई, हम डॉक्टर पर अपार श्रद्धा रखकर दवाई का सेवन करते हैं। हमारी प्रकृति ठीक हो जाती है। बिना श्रद्धा के मनुष्य ज्ञान भी नहीं प्राप्त कर सकता है। बिना श्रद्धा के मनुष्य विज्ञान भी नहीं सीख सकता है। जैसे परमाणु सबसे छोटा कण होता है। उसमें प्रोटॉन न्यूट्रॉन और इलेक्ट्रॉन होते हैं, वैज्ञानिक ऐसा मानते हैं। उसमें यह होता है, किसी ने उसे देखा नहीं है। गणित में भी बिंदु की ऐसी व्याख्या की गई है कि उसकी लम्बाई चौड़ाई कुछ नहीं है। तुम बिन्दु पर विश्वास नहीं करोगे तो रेखा, त्रिकोण चौकोर, गोल, भूमिति नहीं सीखी जा सकती है। श्रद्धा रखनी पड़ती है। अर्जुन पूछते हैं जो शास्त्र नहीं जानते किंतु श्रद्धा रखते हैं यह सात्विक है या राजसिक या तामसिक कौन से निष्ठा है? राजसिक, तामसिक, सात्त्विक गुणों से प्रकृति बनी हुई है। हर जीव में यह तीन गुण होते है। उदाहरण के लिए हम समझते हैं एक कार चलाने के लिए पेट्रोल, इञ्जन, स्टेयरिङ्ग भी चाहिए। ब्रेक भी आवश्यक रहेगा उसी प्रकार तीन गुणों के बिना संसार का काम नहीं चलता है। स्टेयरिंग सत्त्वगुण है, दौड़ने वाला रजोगुण, आराम विश्रान्ति तमोगुण है। सारा संसार, सारे भूत मात्र तीन गुणों के कारण ही चलते हैं। यह तीन गुण एक दूसरे पर हावी होते रहते हैं। जैसे हम जल्दी उठने की कोशिश करते हैं। सुबह उठकर योगासन करते हैं, तब सत्त्वगुण हावी होता है। कार्य करते समय रजोगुण हावी होता है और जब हम थक कर सो जाते हैं, तब तमोगुण का प्रभाव होता है। यह तीनों गुणों का प्रभाव कम ज्यादा होता रहता है।

17.2

श्रीभगवानुवाच
त्रिविधा भवति श्रद्धा, देहिनां(म्) सा स्वभावजा|
सात्त्विकी राजसी चैव, तामसी चेति तां(म्) शृणु||17.2||

श्री भगवान बोले - मनुष्यों की वह स्वभाव से उत्पन्न हुई श्रद्धा सात्त्विकी तथा राजसी और तामसी - ऐसे तीन तरह की ही होती है, उसको (तुम) मुझसे सुनो।

विवेचन- श्रद्धा तीन प्रकार की होती है कभी सात्त्विक, राजसिक या तामसिक होती है। हमारा वर्तन किस प्रकार का है? उसी प्रकार की श्रद्धा होती है। श्रद्धा सदा पवित्र है किन्तु जैसे-जैसे जीव के साथ वह जुड़ जाती है उसके अनुसार वहाँ सात्त्विक, राजसिक या तामसिक बन जाती है। ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

गंगोदक अत्यंत पवित्र।
परी घातला मद्य पात्रात।
तरी लवू नेये त्याला हात ।।

गङ्गोदक यानी गङ्गाजल अत्यन्त पवित्र होता है, लेकिन अगर उसे मद्य अर्थात दारू के पात्र में डाल दिया जाए तो उसे हाथ नहीं लगाना चाहिए। उसे स्पर्श नहीं करना चाहिए। वैसे ही शुद्ध स्वर्ण शुद्ध होता है। गहने बनाने के लिए उसे अशुद्ध करना पड़ता है। अब वह 20 कैरेट या 22 कैरेट का हो जाता है। यानी 24 कैरेट नहीं रहता है। वैसे ही श्रद्धा पवित्र है, किन्तु जिस रूप में वह जुड़ जाती है वैसे ही बन जाती है।

17.3

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य, श्रद्धा भवति भारत|
श्रद्धामयोऽयं(म्) पुरुषो, यो यच्छ्रद्धः(स्) स एव सः||17.3||

हे भारत ! सभी मनुष्यों की श्रद्धा अन्तःकरण के अनुरूप होती है। यह मनुष्य श्रद्धामय है। (इसलिये) जो जैसी श्रद्धावाला है, वही उसका स्वरूप है अर्थात् वही उसकी निष्ठा (स्थिति) है।

विवेचन- जिस व्यक्ति ने जैसा संस्कार ग्रहण किया, वैसे उसकी श्रद्धा बन जाती है। **जैसे हम क्रिया करते हैं, उस पर वैसी प्रतिक्रिया होती है**। वैसा ही स्वभाव बन जाता है । ज्ञानेश्वर महाराज कहते है-

पानी तत्वतः असे जीवन
परी विषा संगे
घेई प्राण।।

पानी जीवन है किन्तु विष के साथ वह प्राण लेने वाला भी बन जाता है।

झाड जाणावे फुल पाहून ।
मन जाणावे बोल ऐकून ॥

फूल को देखकर पेड़ का पता चलता है, वैसे ही मनुष्य के बोल से मनुष्य का व्यक्तित्व पता चलता है।

एक बार एक राजा, प्रधान जी और सेवक जङ्गल में कहीं भटक गए थे। वहाँ पर एक अन्धा साधु बैठे थे। सेवक वहाँ गया, उसने साधु से पूछा- ए गोसावड्या कोई यहाँ आया था क्या? साधु महाराज ने कहा यहाँ कोई नहीं आया। उसके बाद दूसरा आदमी गया उसने कहा-हे साधु! यहाँ पर कोई आया था क्या? साधु ने कहा- यहाँ एक आदमी आया था। उसके बाद राजा वहाँ गया और उसने पूछा प्रणाम महाराज! यहाँ हम रास्ता भटक गए हैं। आप कृपया बताइए यहाँ पर कोई आया था क्या? साधू ने कहा हाँ, यहाँ एक सेवक और एक मन्त्री आया था और आप राजा बात कर रहे हैं।
राजा ने पूछा आपने कैसे पहचाना?

साधु महाराज ने कहा - तुम्हारी भाषा से तुम्हारे वर्तन का पता चल गया। यानी जैसे हमारी क्रिया होती है, वैसी प्रतिक्रिया होती है। उससे श्रद्धा पता चल जाती है।

एक बार तीन दोस्तों को 500 का नोट मिला। एक ने कहा चलो इससे हम लोग दारू पीते हैं। दूसरे का नहीं दारु नहीं पीते होटल में खाना खाते हैं। तीसरे ने कहा- अरे! यह मन्दिर दिख रहा है। इस मन्दिर में कोई आया होगा! उसी का यह नोट गिर गया होगा। चलो मन्दिर के ऑफिस में इसे जमा करते है। ऐसे ही श्रद्धा अनुसार वर्तन होता है।

17.4

यजन्ते सात्त्विका देवान्, यक्षरक्षांसि राजसाः|

प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये, यजन्ते तामसा जनाः||17.4||

सात्त्विक मनुष्य देवताओं का पूजन करते हैं, राजस मनुष्य यक्षों और राक्षसों का और दूसरे (जो) तामस मनुष्य हैं, (वे) प्रेतों (और) भूतगणों का पूजन करते हैं।

विवेचन- सात्विक मनुष्य शिवजी की, श्रीराम जी की, सूर्य की, देवी देवताओं की पूजा करते हैं। राजसी मनुष्य गन्धर्वों की पूजा करते हैं। आज के जमाने में कहें तो एक्टर की, गायक की, राजनेता की पूजा करते हैं, मनुष्य की पूजा करते हैं। कुछ तामसिक लोग भूतप्रेत की पूजा करते हैं। उसके लिए बलि चढ़ाते हैं। शराब का नैवेद्य दिखाते हैं। श्मशान में जाकर पूजा करते हैं। यह तामसिक पूजा होती है। स्वयं की तरफ देखने से पता चलता है कि हम तामसिक हैं, सात्त्विक है या राजसिक है।

17.5, 17.6

अशास्त्रविहितं(ङ्) घोरं(न्), तप्यन्ते ये तपो जनाः|
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः(ख्), कामरागबलान्विताः||17.5||
कर्शयन्तः(श्) शरीरस्थं(म्), भूतग्राममचेतसः|
मां(ञ्) चैवान्तः(श्) शरीरस्थं(न्), तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान्||17.6||

जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित घोर तप करते हैं; (जो) दम्भ और अहंकार से अच्छी तरह युक्त हैं; (जो) भोग- पदार्थ, आसक्ति और हठ से युक्त हैं; (जो) शरीर में स्थित पाँच भूतों को अर्थात् पांच भौतिक शरीर को तथा अन्तःकरण में स्थित मुझ परमात्मा को भी कृश करने वाले हैं उन अज्ञानियों को (तू) आसुर निष्ठा वाले (आसुरी सम्पदा वाले) समझ। (17.5-17.6)

विवेचन- तामसिक लोग भी तप करते हैं। वह तप बल की वृद्धि के लिए किया जाता है। सिद्धि प्राप्त करने के लिए तप करते हैं। उग्र तपस्या करते है। जैसे कुम्भ मेले में हम देखते हैं कि कुछ लोग उल्टे लटक जाते हैं या खुद को जमीन में गाड लेते हैं। यह कभी-कभी दिखावे के लिए भी कर लिया जाता है। इससे अहङ्कार बढ़ता है। कभी-कभी यह क्रिया दूसरों का बुरा करने के लिए भी की जाती है। यह क्रिया दम्भ से युक्त होती है। कुछ पञ्च महाभूतों के शरीर को कष्ट देकर तप करते हैं। भगवान कहते हैं ऐसे तप करने वालों के कारण मुझे भी कष्ट होते हैं। जो अपने शरीर को कष्ट देते हैं वह आसुरी लोग होते हैं।

17.7

आहारस्त्वपि सर्वस्य, त्रिविधो भवति प्रियः|
यज्ञस्तपस्तथा दानं(न्), तेषां(म्) भेदमिमं(म्) शृणु||17.7||

आहार भी सबको तीन प्रकार का प्रिय होता है और वैसे ही यज्ञ, तप (और) दान (भी तीन प्रकार के होते हैं अर्थात् शास्त्रीय कर्मों में भी गुणों को लेकर तीन प्रकार की रुचि होती है,) (तू) उनके इस भेद को सुन।

विवेचन- व्यक्तियों का आहार भी अलग-अलग होता है। सात्त्विक, राजसिक और तामसिक ऐसे तीन प्रकार के आहार होते हैं। यज्ञ, दान भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं। यह एक प्रकार का लिटमस टेस्ट है, जिससे हम लोग जान लेते हैं कि हमारा स्वभाव कैसा है? हमारी वर्तन कैसा है? सात्विक, राजसी या तामसिक है।

17.8

आयुः(स्) सत्त्वबलारोग्य, सुखप्रीतिविवर्धनाः|
रस्याः(स्) स्निग्धाः(स्) स्थिरा हृद्या, आहाराः(स्) सात्त्विकप्रियाः||17.8||

आयु, सत्त्वगुण, बल, आरोग्य, सुख और प्रसन्नता बढ़ाने वाले, स्थिर रहने वाले, हृदय को शक्ति देने वाले, रसयुक्त (तथा) चिकने - (ऐसे) आहार अर्थात् भोजन करने के पदार्थ सात्त्विक मनुष्य को प्रिय होते हैं।

विवेचन- **जिस प्रकार का भोजन करने से हमारी आयु बढ़ती है। हमारा आरोग्य अच्छा रहता है। ऐसा आहार सात्त्विक आहार होता है। सात्त्विक आहार रसीला होता है। वह रस युक्त होता है। उसमें स्निग्धता होती है।** स्निग्धता शुद्ध देसी घी से बढ़ती है। एक चम्मच शुद्ध देसी घी तो भोजन में होना ही चाहिए। सात्त्विक आहार शान्ति प्रदान करने वाला, हृदय को, मन को अच्छा लगने वाला होता है। सात्त्विक आहार से जलन नहीं होती है यह ताजा होता है।

जैसी जेवणाची रुचि।
तैसी निष्पत्ति पक्वान्नाची
आणी जेवणार्याची ।।

अल्प मात्रा से तृप्त होने वाला सात्विक आहार होता है।

जे तृप्त करी अपार। अल्पमात्र सेवने।

खातांना जो लागे मधुर
तैसे परिणाम हितकर।।

सात्विक आहार खाते समय मधुर होता है, उसके परिणाम भी हितकर होते है।
या सात्त्विक रसाची वृष्टी। जो जो होते देहावरती।।
तोता देहात येती भरती। दीर्घायुष्याची।।

17.9

कट्वम्ललवणात्युष्ण, तीक्ष्णरूक्षविदाहिनः|
आहारा राजसस्येष्टा, दुःखशोकामयप्रदाः||17.9||

अति कड़वे, अति खट्टे, अति नमकीन, अति गरम, अति तीखे, अति रूखे और अति दाह कारक आहार अर्थात् भोजन के पदार्थ राजस मनुष्य को प्रिय होते हैं, (जो कि) दुःख, शोक और रोगों को देने वाले हैं।

विवेचन- जो अत्यन्त कड़वा है, अत्यन्त खट्टा है, अत्यन्त तीखा है, अत्यन्त नमकीन अत्यन्त गर्म, अत्यन्त रूखा और अत्यन्त दाह्यकर है, यह रजोगुणी आहार होते हैं। रजोगुण के कारण ही नमक खाने की इच्छा होती है। अचार खाने की इच्छा होती है। तीखा खाने की इच्छा होती है। सूखा खाने की इच्छा होती है। जैसे चिवड़ा खाना गलत नहीं है लेकिन इसको आदत बनाना गलत है। यह राजसिक वृत्ति होती है।

गले को जलाने वाला आहार पूरा दिन कष्ट देता है। इससे विभिन्न रोग आते हैं। जिस आहार का भगवान को भोग चढ़ा सकते हैं, वह सात्त्विक आहार कहा जाता है।

17.10

यातयामं(ङ्) गतरसं(म्), पूति पर्युषितं(ञ्) च यत्|
उच्छिष्टमपि चामेध्यं(म्), भोजनं(न्) तामसप्रियम्||17.10||

जो भोजन सड़ा हुआ, रस रहित, दुर्गन्धित, बासी और जूठा है तथा (जो) महान अपवित्र (मांस आदि) भी है, (वह) तामस मनुष्य को प्रिय होता है।

विवेचन- अब भगवान तामसिक आहार के बारे में बताते है। यह दुर्गन्धयुक्त और बासी होता है। आयुर्वेद के अनुसार चार घण्टे के बाद खाना बासी हो जाता है। बासी खाना खाने की इच्छा होना, तामसिक गुण है। जूठन खाना, अपवित्र भोजन करना यानी

बिना नहाए हुए, स्वच्छता का पालन किए बिना, भोजन करना तामसिक होता है। भोजन पकाने वाले व्यक्ति के विचारों को भी महत्व दिया गया है। उसके विचार अगर अच्छे होंगे तो ही खाना अच्छा बनेगा। उसके विचारों का परिणाम भोजन पर होता है। जिसे भगवान के सामने भोग लगाने की इच्छा नहीं होगी, वह तामसिक अन्न होता है।
ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

वाघापरी जरी मिळाले अन्न परी ते सेवन न करी घाण सुटे पर्यंत। ।
लहान मुला समान अन्न खातो चिखल करुन ॥
बायका पोरे संगे घेउन एकच पात्री।

यानी जो जूठन खाना है, वह सब तामसिक आहार में आता है।

17.11

अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो, विधिदृष्टो य इज्यते|
यष्टव्यमेवेति मनः(स्), समाधाय स सात्त्विकः||17.11||

यज्ञ करना ही कर्तव्य है - इस तरह मन को समाधान (संतुष्ट) करके फलेच्छा रहित मनुष्यों द्वारा जो शास्त्रविधि से नियत यज्ञ किया जाता है, वह सात्त्विक है।

विवेचन- अपने स्वधर्म का पालन करना यही रोज का यज्ञ है। कुछ भी अपेक्षा न रखते हुए, जैसे माँ घर का सारा काम करती है। सबके के लिए खाना बनाती है। उसकी कुछ भी अपेक्षा नहीं होती, तब उसका काम सात्त्विक हो जाता है। क्योंकि उसने कोई अपेक्षा न रखते हुए भोजन बनाया है। यह नहीं सोचती कि मुझे इससे क्या मिलेगा। वह कर्तव्य के भाव से करती जाती है। यह सात्विक यज्ञ कहलाता है।

17.12

अभिसन्धाय तु फलं(न्), दम्भार्थमपि चैव यत्|
इज्यते भरतश्रेष्ठ, तं(म्) यज्ञं(म्) विद्धि राजसम्||17.12||

परन्तु हे भरतश्रेष्ठ अर्जुन ! जो यज्ञ फल की इच्छा को लेकर अथवा दम्भ (दिखावटीपन) के लिये भी (किया जाता है), उस यज्ञ को (तुम) राजस समझो।

विवेचन- फिर राजसिक कार्य कैसे होता है? मुझे यह काम करने से क्या मिलेगा? ऐसा सोचना राजसिक कर्म होता है। यह सोचना बुरा नहीं होता है, किन्तु श्रेणी नीचे आती है। जैसे एक छात्र दो घण्टे पढ़ता है, उसे वह स्वयं ही समझ में आता है। उसकी माँ कुछ भी नहीं बताती है। वह व्यायाम करता है, पढ़ाई करता है। दूसरा बच्चा है जिसे माँ कहती है बेटा पढ़ाई कर, फिर मैं तुझे आइसक्रीम, चॉकलेट लाकर दूँगी। कुछ मिल रहा है, इसलिए वह बच्चा पढ़ाई कर रहा है। यह राजसिक कर्म के श्रेणी में आता है। कभी-कभी राजसिक कर्म दम्भ या दिखावा करने के लिए भी किए जाते हैं। ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

दूसरा जो राजस यज्ञ
तोही सात्विक यज्ञा समान
परी श्राद्ध भोजन द्यावे
निमंत्रण राजास जैसे।

जैसे पिताजी का श्राद्ध करना है, यह कर्तव्य भी करना है और पिताजी की श्राद्ध में अगर हम लोग MLA, MP को भोजन के लिए निमन्त्रण देते हैं, तो मेरा काम भी हो जाएगा। मुझे कॉन्ट्रेक्ट भी मिल जाएगा। ऐसी इच्छा करना राजसिक कर्म होता है।

17.13

विधिहीनमसृष्टान्नं(म्), मन्त्रहीनमदक्षिणम्।
श्रद्धाविरहितं(म्) यज्ञं(न्), तामसं(म्) परिचक्षते।।17.13।।

शास्त्र विधि से हीन, अन्न-दान से रहित, बिना मन्त्रों के, बिना दक्षिणा के (और) बिना श्रद्धा के किये जाने वाले यज्ञ को तामस यज्ञ कहते हैं।

विवेचन- अब भगवान आगे तामसिक यज्ञ के बारे में बताते हैं। जो कार्य शास्त्र विधि के अनुसार नहीं होता है। दान भी जिसमें नहीं होता है। या मन्त्रों का उच्चारण सही ढंग से नहीं होता है। जो यज्ञ बिना श्रद्धा के किया जाता है। वह तामसिक यज्ञ कहलाता है। कैसे भी काम कर डाला, उसमें कोई विधि विधान नहीं था। उसमें कोई दान धर्म भी नहीं था। मन्त्र सही ढंग से नहीं बोले गए, ऐसा कर्म तामस कर्म कहलाता है। जैसे विज्ञान की भाषा में फार्मूला होता है, वैसे ही हर कार्य करने के लिए फार्मूला या मन्त्र होते हैं। मन्त्र का उच्चारण सही ढंग से होना चाहिए। कार्य करने के लिए कोई उचित सलाहकार या प्रशिक्षित व्यक्ति को दक्षिणा देनी चाहिए। दक्षिणा के बिना किया हुआ यज्ञ योग्य नहीं होता है। वह तामसिक यज्ञ होता है। तप भी शारीर से, वाणी से, मन से भी होते है। दान के भी विविध भेद होते हैं। इसको भी समझना है। हम अपने कार्य को सात्त्विक कार्य कैसे बना सकते है? यह हम अगले सत्र में देखेंगे। भगवान के चरणों में आज का विवेचन समर्पित करके इस सुन्दर सरल सत्र का समापन हुआ।

:: प्रश्नोत्तर::

प्रश्नकर्ता- विशेष श्रीवास्तव भैया

प्रश्न- आहार कैसा होना चाहिए?

उत्तर- यह स्वयं का स्वभाव को पहचानने का अध्याय है। यदि हमें अपनी तामसी प्रवृत्ति का ज्ञान हो गया है, तो प्रयास होना चाहिए कि धीरे धीरे राजस के बल पर तामस को कम करें, फिर सात्त्विकता की ओर बढ़ें। आयुर्वेद बताता है कि किसी के लिए कोई एक आहार निश्चित नहीं किया जा सकता। बीस वर्षीय युवक और अस्सी वर्षीय वृद्ध का आहार समान नहीं हो सकता। श्रीभगवान कहते हैं -

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥6:17॥

मनुष्य के स्वभाव, कार्य और अवस्था के अनुसार ही आहार होना चाहिए। कार्य करने वाला रजोगुण है, उस पर सतोगुण का नियन्त्रण होना चाहिए, तभी उसका विवेक जागृत होगा। रजोगुण से कामना उत्पन्न होती है, उसी से सांसारिक क्रियाएं चलती हैं। संसार चलाने हेतु तीनों गुण आवश्यक हैं। उन्हीं से चार प्रकार के मनुष्य होते हैं -

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम्॥ 4:13॥

चारों प्रकार के लोग अपना अपना काम करते हैं, भगवान ने जन्म के अनुसार नहीं, कर्म के अनुसार चारों वर्ण बताए हैं। फैक्ट्री में मजदूर आवश्यक है, सीमा पर जवान आवश्यक है। हमें चारों वर्णों और उनके कर्मों का सम्मान करना चाहिए। हम किस स्थिति में हैं? यह देखना आवश्यक है। उसी अनुसार आहार-विहार आवश्यक है।

प्रश्नकर्ता- गायत्री दीदी

प्रश्न- शिक्षित और अशिक्षित की श्रद्धा में क्या अन्तर है?

उत्तर- श्रद्धा अपने स्वभाव के अनुसार सात्त्विक राजस या तामस हो सकती है। शिक्षित या अशिक्षित होने से श्रद्धा बदलती नहीं है। कोई अनपढ़ देवताओं की पूजा करता है, तो उसकी श्रद्धा सात्त्विक है। पढा लिखा होकर भी जानबूझकर भूत-प्रेत की तन्त्र विद्या करता है, तो वह तामसी श्रद्धा है। अनेक अशिक्षित सात्त्विक श्रद्धा भाव वाले होते हैं। बिना औपचारिक शिक्षा ग्रहण किए

अनेक सन्त महात्मा या कवि हुए हैं जिन्होंने श्रद्धापूर्वक भक्ति रचनाएँ रची हैं।

श्रीभगवान कहते हैं -

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु॥ 17:02॥

अपने स्वभाव के अनुसार ही सात्त्विक राजसी या तामसी श्रद्धा होती है।

प्रश्नकर्ता- कुलदीप भैया
प्रश्न- सात्त्विक प्रवृत्ति और तामसी प्रवृत्ति के लोग एक साथ कैसे रह सकते हैं?
उत्तर- न तो कोई पूर्णतः सात्त्विक होता है, न ही पूर्णतः तामसी। हम स्वयं ही अलग-अलग समय में अलग-अलग प्रवृत्ति के होते रहते हैं। सुबह जल्दी उठते हैं, तो सात्त्विक प्रवृत्ति है। दिन में काम धन्धे में लग जाते हैं, तो राजसी प्रवृत्ति के हो जाते हैं। रात को सोते हैं, तो तामसिकता आ जाती है। पूर्णतः सात्त्विक, पूर्णतः राजसी अथवा पूर्णतः तामसिक कोई नहीं होता। सतोगुण से विवेक जागृत होता है। हम प्रयत्न करके अपने तमोगुण, रजोगुण को कम करके सतोगुण बढ़ा सकते हैं।

प्रश्नकर्ता- वीनू दीदी
प्रश्न- आराधना के समय मन इधर-उधर क्यों होने लगता है?
उत्तर- चञ्चलता मन का स्वाभाविक गुण है।

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद् दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥ 6:34॥

मन की चार अवस्थाएँ होती हैं - मूढ़ चित्त, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध।

मन को एकाग्र करने हेतु आत्मसंयम सीखना पड़ेगा। अध्याय छः आत्मसंयमयोग है। सबसे पहले शरीर पर नियन्त्रण आना चाहिए। इन्द्रियों पर नियन्त्रण होने के बाद मन पर नियन्त्रण आता है। यह प्रवास है, पूजा न करने से पूजा करना अच्छा ही है। धर्म-विरुद्ध कामना करना गलत है। धर्म कामना भगवान से माँगना अच्छा है। हम भगवान से प्रार्थना करते हैं -

अन्तर में स्थित रह मेरी बागडोर पकड़े रहना।
निपट निरंकुश चंचल मन को सावधान करते रहना॥

प्रश्नकर्ता- शोभा देशमुख दीदी
प्रश्न- हमारे गुण पूर्व जन्मों से आते हैं, या इस जन्म से आते हैं?
उत्तर- हमने पूर्व जन्मों में और इस जन्म में जो संस्कार ग्रहण किये हैं, या जैसे हम कर्म करते हैं, उसी के अनुसार हमारा स्वभाव सात्त्विक राजसी या तामसी बनता है। यह स्थाई नहीं होता, हम अपनी साधना से परिवर्तन कर सकते हैं। कोई सात्त्विक प्रवृत्ति वाला व्यक्ति तामसी लोगों की सङ्गति में पड़कर तामसी बन जाएगा। इसी प्रकार तामसिक व्यक्ति सत्सङ्ग से सात्त्विक बन जाता है।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||